R.N.I. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

मूल्य-4 रुपये, वर्ष-22, अङ्क-10 अक्टूम्बर 2022 (1)

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ०प्र०) का

मासिक मुख समाचार पत्र

मङ्गलायतन

आतम बने परमात्मा, हो शान्ति सारे देश में।
है देशना-सर्वोदयी, महावीर के सन्देश में॥

तीर्थधाम मङ्गलायतन में
दशलक्षण महापर्व की झलकियाँ

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ.प्र.) का

मासिक मुखपत्र

वर्ष-22, अङ्क-10 (वी.नि.सं. 2548; वि.सं. 2079) अक्टूबर 2022

दीपावली विशेषांक

वीर गये निर्वाण चलिए उत्सव में

वीर गये निर्वाण चलिए उत्सव में ।।टेक ।।

कार्तिक श्याम अमावस प्यारी,
वीर मुक्ति की तिथि सुखकारी ।
गौतम पायो ज्ञान ।।1 ।।

इन्द्र महोत्सव करने आये,
दीप रतन के ठाठ जमाये ।
आया देखो पर्व महान ।।2 ।।

मायामई तन प्रभु का रचके,
मोक्ष कल्याणक पूजा करके ।
कीना अंत विधान ।।3 ।।

आओ हम भी भक्ति बढ़ावें,
निर्दोष श्रीफल गोला चढावें ।
करें वीर यशगान ।।4 ।।

वीर उपकार कभी न भुलावें,
उनको निज आदर्श बनावें ।
प्राप्त करें 'शिव' थान ।।5 ।।

साभार : मंगल भक्ति सुमन

संस्थापक सम्पादक
स्व. पण्डित कैलाशचन्द्र जैन, अलीगढ़
स्व. श्री पवन जैन, अलीगढ़

सम्पादक
डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन

सह सम्पादक
पण्डित सुधीर जैन शास्त्री, मङ्गलायतन

सम्पादक मण्डल
ब्रह्मचारी पण्डित ब्रजलाल शाह, वढ़वाण
बाल ब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़
डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर
श्रीमती बीना जैन, देहरादून

सम्पादकीय सलाहकार
डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, जयपुर
पण्डित विमलदादा झाँझरी, उज्जैन
श्री चिरंजीलाल जैन, भावनगर
श्री प्रवीणचन्द्र पी. वोरा, देवलाली
श्री वसन्तभाई एम. दोशी, मुम्बई
श्री श्रेयस् पी. राजा, नैरोबी
श्री विजेन वी. शाह, लन्दन

मार्गदर्शन
डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका
पण्डित अशोक लुहाड़िया, अलीगढ़

अङ्क के प्रकाशन में सहयोग
श्रीमती जिनेन्द्रमाला
धर्मपत्नी स्व. श्री हेमचन्द जैन
हस्ते श्रीमती पूनम देवेन्द्र जैन
सहारनपुर (उ.प्र.)

क्या - कहाँ

दीपावली प्रवचन	5
गुरुदेव का प्रवचन	11
श्री समयसार नाटक	15
भगवान 'सन्मति' का	20
भगवान महावीर और जैनधर्म	22
श्रुत परम्परा एवं श्रुतज्ञान....	24
कवि परिचय	26
प्रेरक प्रसंग	29
जिस प्रकार-उसी प्रकार	30
समाचार-दर्शन	31

शुल्क :
वार्षिक : 50.00 रुपये
एक प्रति : 04.00 रुपये

दीपावली प्रवचन

जयवंत वर्ते.....

साक्षात् मोक्षमार्गस्वरूप वीतरागता!

गुरुदेवश्री नूतनवर्ष का उपहार देते हैं।

कार्तिक कृष्णा अमावस्या के दिन महावीर भगवान का मोक्षकल्याणक मनाया गया और वीर संवत् का नूतन वर्ष प्रारम्भ हुआ। नूतन वर्ष के उपहार में पूज्य गुरुदेव ने साक्षात् मोक्षमार्ग का स्वरूप प्रदान किया। पंचास्तिकाय की 172वीं गाथा में 'स्वस्ति साक्षात् मोक्षमार्ग.....' ऐसा कहकर आचार्य भगवान आशीर्वाद देते हैं कि हे भव्य जीवों! तुम वीतरागतास्वरूप साक्षात् मोक्षमार्ग की आराधना करो.... यही सन्देश पूज्य गुरुदेव ने नूतन वर्ष के मांगलिक में सुनाया - वह यहाँ दिया जा रहा है।

आज के दिन भगवान महावीरस्वामी ने चैतन्य ध्यान द्वारा मोक्ष प्राप्त किया.... और इन्द्रों ने पावापुरी में असंख्य रत्नमयी दीपकों से भगवान के मोक्ष का महोत्सव मनाया। चैतन्य की प्रतीति और ज्ञान करके उसमें स्थिर होने पर आत्मा के असंख्य प्रदेश में केवलज्ञान के अनंत दीपक प्रज्वलित हो जाते हैं, वह सच्ची दीपावली है। वह कैसे प्रगट हो?—यह बात पंचास्तिकाय की 172वीं गाथा में चल रही है।

❖ महावीर भगवान आज मोक्ष को प्राप्त हुए.....

❖ गौतम गणधर आज केवलज्ञान को प्राप्त हुए.....

❖ सुधर्मस्वामी आज मुख्य आचार्य पद को प्राप्त हुए.....

❖ इन्द्रों और नरेन्द्रों ने पावापुरी में आकर भगवान के मोक्ष का तथा गौतमस्वामी के केवलज्ञान का महोत्सव मनाया।

मोक्ष का सच्चा उत्सव तो यद्यपि मोक्षमार्ग की आराधना द्वारा मनाया जाता है; किन्तु जिसके पास जो कुछ होता है, उसी के द्वारा वह मनाते हैं.... सम्यग्दर्शनादि द्वारा मोक्ष को साधते-साधते अभी जिन्हें राग शेष रह गया है, ऐसे

रागी जीव शुभराग द्वारा मोक्ष प्राप्त करनेवाले तथा मोक्ष की साधना करनेवाले जीवों का बहुमान-भक्ति आदि करके उत्सव मनाते हैं; उसमें राग टूटकर जितने अंश में अपनी परिणति वीतरागता की ओर झुकती है, उतना ही लाभ है।

चैतन्यस्वभाव की प्रतीति करके वीतरागता द्वारा मोक्ष की आराधना करना, वह भगवान के मोक्ष का सच्चा उत्सव है। मोक्ष तो भगवान ने प्राप्त किया; फिर उसका उत्सव मनानेवाले को क्या लाभ हुआ?—तो कहते हैं कि भगवान जैसे शुद्ध रत्नत्रय का जितना भाव अपने आत्मा में प्रगट किया, उतना मोक्ष भाव आया; उसने अपने स्वकालरूप 'दी' को स्वभाव में 'वाली' (उन्मुख करके) दीवाली मनाई; भगवान के मोक्ष का सच्चा उत्सव मनाया। इसके अतिरिक्त जो जीव भगवान के मोक्षभाव को न जाने और उसका अंश भी अपने में प्रगट न करे, वह जीव मात्र रागरूप बंध भाव द्वारा मोक्ष का सच्चा उत्सव किस प्रकार मना सकेगा? मोक्ष के स्वरूप की प्रतीतिपूर्वक उसके प्रति जैसा बहुमान एवं उल्लास ज्ञानी को आयेगा, वैसा अज्ञानी को नहीं आ सकता।—इस प्रकार भगवान के मोक्ष का उत्सव मनानेवाले को भगवान जैसा भाव अर्थात् सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप वीतराग भाव अपने में प्रगट करना चाहिये।

भगवान के मोक्ष का उत्सव कौन मनाता है?

—कि जो मोक्षार्थी हो वह।

वह मोक्षार्थी जीव किसप्रकार निर्वाण प्राप्त करता है?

साक्षात् मोक्ष का अभिलाषी भव्यजीव, अत्यंत वीतरागता द्वारा भवसागर को पार करके, शुद्धस्वरूप परम अमृत समुद्र का अवगाहन करके शीघ्र निर्वाण को प्राप्त करता है।

देखो, आज भगवान के निर्वाण के दिन निर्वाण प्राप्त करने की बात आई है। भगवान का आत्मा, मोक्षार्थी होकर चिदानन्दस्वभाव का भान करके उसमें लीनता द्वारा वीतराग हुआ।—इसप्रकार राग-द्वेष-मोहरूप भवसागर से पार होकर परम आनन्दसागर ऐसे अपने शुद्धस्वरूप में निमग्न होकर निर्वाण को प्राप्त हुआ। निर्वाण का ऐसा ही मार्ग भगवान ने भव्य जीवों को

दर्शाया है। हे भव्य जीवो! वीतरागता ही साक्षात् मोक्षमार्ग है.... उसी के द्वारा भव्यजीव भवसागर से पार होकर निर्वाण प्राप्त करते हैं।

तम्हा णिव्वुदिकामो रागं सव्वत्थ कुणदु मा किंचि।
सो तेण वीदरागो भवियो भवसायरं तरदि॥१७२॥

सम्पूर्ण शास्त्र का तात्पर्य आचार्य भगवान ने इस सूत्र में बतलाया है। भव्य जीव किसप्रकार भव सागर से पार होते हैं?—कि वीतरागता द्वारा। बस, वीतरागता ही समस्त शास्त्र का तात्पर्य है, वही शास्त्र का हार्द है। कहीं भी किंचित् राग रखकर भवसागर से पार नहीं हुआ जाता, किन्तु समस्त वस्तुओं के सम्पूर्ण राग को छोड़कर, अत्यन्त वीतराग होकर, चैतन्यस्वरूप में लीनता द्वारा ही भवसागर से पार होते हैं।

'विस्तार से बस होओ!' आचार्यदेव कहते हैं कि अधिक क्या कहें? समस्त तीर्थंकर भगवन्त इस उपाय से ही अर्थात् वीतरागता द्वारा ही—भवसागर से पार हुए हैं, और उन्होंने अन्य मुमुक्षु जीवों को भी यह, वीतरागता का ही उपदेश दिया है। इसप्रकार वीतरागता ही शास्त्र का तात्पर्य है और वही मोक्षमार्ग का सार है। इसलिये,

❖ 'जयवंत वर्ते वीतरागता... कि जो साक्षात् मोक्षमार्ग का सार होने से शास्त्र तात्पर्यभूत है।'

❖ 'स्वस्ति साक्षात्मोक्षमार्गसारत्वेन शास्त्रतात्पर्यभूताय वीतराग-त्वायेति।'

आचार्यदेव साक्षात् मोक्षमार्ग के प्रति प्रमोद से कहते हैं कि अहो! ऐसा मोक्षमार्ग जयवन्त वर्ते!

'विस्तार से बस होओ... साक्षात् मोक्षमार्ग के साररूप वीतरागता जयवन्त वर्ते!'—जैसा यहाँ कहा है, उसीप्रकार प्रवचनसार में भी पहला अधिकार समाप्त करते हुए आचार्यदेव ने कहा है कि—जयवंत वर्तो स्याद्वाद मुद्रित जैनेन्द्र शब्दब्रह्म;

जयवंत वर्तो वह शब्दब्रह्ममूलक आत्मतत्त्वोपलब्धि—कि जिसके प्रसाद से, अनादि संसार से बँधी हुई मोहग्रन्थि तुरन्त ही छूट गई; और

जयवंत वर्तो परम वीतरागचारित्रस्वरूप शुद्धोपयोग—कि जिसके प्रसाद से यह आत्मा स्वयमेव धर्म हुआ।

—इस प्रकार वीतरागी संतों ने जगह-जगह वीतरागता का जय-जयकार करके उसी को साक्षात् मोक्षमार्गरूप से प्रसिद्ध किया है तथा उसी को शास्त्र का तात्पर्य कहा है।

समस्त तीर्थंकर भगवन्तों ने इसी रीति से मोक्ष को साधा और इसीप्रकार उसका उपदेश दिया; इसलिये निश्चित होता है कि यही निर्वाण का मार्ग है, अन्य कोई मार्ग नहीं है। आचार्यदेव कहते हैं कि इसप्रकार निर्वाण का मार्ग निश्चित होने के कारण अब दूसरे प्रलाप से बस होओ; मेरी मति व्यवस्थित हुई है। ऐसा मोक्षमार्ग दर्शानेवाले भगवन्तों को नमस्कार हो।

सव्वे वि य अरहंता तेण विधाणेण खविदकम्मंसा।
किच्चा तधोवदेसं णिव्वादा ते णमोतेसिं॥८२॥ *(प्रवचनसार)*

अहा, इस वीतरागता को ही साक्षात् मोक्षमार्ग के रूप में जयवन्त कहकर, तथा उसी को शास्त्र का तात्पर्य कहकर आचार्यदेव ने अद्‌भुत बात कही है। साक्षात् मोक्षमार्ग अर्थात् सीधा मोक्षमार्ग, सच्चा मोक्षमार्ग तो वीतरागता ही है, अर्थात् मोक्षमार्ग में प्रारम्भ से अन्त तक जो वीतरागता है, वही मोक्षमार्ग है; मोक्षमार्ग के रूप में वीतरागता ही जयवन्त वर्तती है, राग का तो मोक्षमार्ग में से क्षय होता जाता है।

देखो, वीतरागता साक्षात् मोक्षमार्ग है; शास्त्र का तात्पर्य वीतरागता है; वीतरागता में स्वभावोन्मुखता है और पर की उपेक्षा है, क्योंकि पर की उपेक्षा करके स्वभावोन्मुख हुए बिना वीतरागता नहीं होती।

वीतरागता को शास्त्र का तात्पर्य कहा उसके अर्थ में यह बात भी आ गई कि शास्त्र में कहीं राग का तात्पर्य नहीं है; क्योंकि शास्त्र में कहीं वीतरागता को और कहीं राग को तात्पर्य कहा जाये—इसप्रकार दो परस्पर विरुद्ध कथन नहीं होते। भले ही कहीं राग को व्यवहार से मोक्षमार्ग कहा हो या परम्परा से मोक्ष का कारण कहा हो, तथापि उस कथन के समय भी राग, शास्त्र का तात्पर्य नहीं है; शास्त्र का तात्पर्य तो वीतरागता ही है। संतों ने

सम्पूर्ण शास्त्र में अखण्डरूप से वीतरागी तात्पर्य ही गूँथा है।

देखो, यह नूतन वर्ष का उपहार दिया जा रहा है! वीतरागी मोक्षमार्ग को समझकर उसकी आराधना करना, वह अपूर्व उपहार है। जिसने ऐसे वीतरागी मार्ग की सम्यक्श्रद्धा की, उसके आत्मा में अपूर्व नूतन वर्ष का प्रारम्भ हुआ और उसने संतों से सच्चा उपहार लिया।

हे भव्य जीवो! वीतरागता को ही साक्षात् मोक्षमार्ग जानकर उसकी आराधना करो... वीतरागता कैसे होती है ?—तो कहते हैं कि स्वभावोन्मुख होने से वीतरागता होती है। अंतर्स्वभाव में लीन होने से वीतरागी होकर जीव भवसागर से पार होता है और मोक्ष प्राप्त करता है, इसलिये मोक्षेच्छु जीव को-(मोक्षाभिलाषी को) कहीं भी राग किंचित् कर्तव्य नहीं है; स्वभाव में लीनता द्वारा वीतरागता ही कर्तव्य है। वह वीतरागता ही साक्षात् मोक्षमार्ग है... वह वीतरागता जयवंत वर्तो!

* * *

आचार्य भगवन्तों की अत्यन्त महिमापूर्वक गुरुदेव कहते हैं कि—वाह! जंगल में बैठे-बैठे संतों ने अद्भुत कार्य किया है! वीतरागी मोक्षमार्ग को जगत के समक्ष खोलकर सत्यमार्ग को प्रकाशित किया है। अहा, ऐसा वीतरागमार्ग! उसकी 'श्रद्धा करने की रीति' भी अलौकिक है। यदि राग के एक सूक्ष्म अंश की भी रुचि रहे, किसी भी राग को हितकर माने तो वह जीव वीतरागमार्ग की श्रद्धा नहीं कर सकता। चैतन्यस्वभाव की ओर उन्मुख होकर आनन्द की धारा में झूलते हुए मुनिवर वेगपूर्वक मोक्षमार्ग में परिणमित हो रहे हैं, तथापि बीच में राग का एक क्षण भी रह जाये तो उतना मोक्ष की ओर का वेग रुकता है; इसलिये साक्षात् वीतरागता ही मोक्षाभिलाषी का कर्तव्य है।

* * *

देखो, यह मोक्ष के मूल मंत्र! इनमें तो साक्षात् वीरागता का ही उपदेश है। अहा! मोक्षाभिलाषी को कहीं भी एवं किंचित् राग नहीं करना चाहिये। राग भवसागर से पार होने का साधन नहीं है; वह तो उदय भाव है और उसका फल संसार है; इसलिये मोक्षाभिलाषी का वह किंचित् भी कर्तव्य

नहीं है; साक्षात् वीतरागता ही मोक्षाभिलाषी का कर्तव्य है, क्योंकि उसी के द्वारा भवसागर से पार हुआ जाता है।

* * *

अहा हा! मोक्षाभिलाषी की यह बात तो देखो! कुन्दकुन्दाचार्यदेव ज्ञान के अगाध समुद्र थे, उनका आत्मा अत्यन्त पवित्र था.. वे चैतन्य के आनन्द में झूलते थे... चैतन्य के आनन्द में झूलते-झूलते राग का किंचित् विकल्प उठने से यह शास्त्र लिखा गया है। उसमें कहते हैं कि—साक्षात् वीतरागतारूप जो मोक्षमार्ग, उसकी प्रभावना के हेतु हम यह कहते हैं... हम मोक्षार्थी हैं... हम राग की इच्छा नहीं रखते। अहा, कितने भद्र! कितने निरभिमानी! कितने पवित्र!! भाई, राग की रुचि नहीं करना। हमारा उत्साह वीतरागी मोक्षमार्ग में ही है; राग में हमारा उत्साह नहीं है, और हे मोक्षार्थी श्रोताओं! तुम भी वीतरागी मोक्षमार्ग के प्रति उत्साहित रहना, बीच में राग आये उसके प्रति उत्साहित न होना।

* * *

शास्त्रों का हृदय खोलकर संत कहते हैं कि परम वीतरागता ही कर्तव्य है, वही साक्षात् मोक्षमार्ग है। अहा! जो जीव पात्र होकर ऐसा वीतराग मार्ग समझता है, उसे समझानेवाले संतों के प्रति कितनी विनय होती है! कितना बहुमान होता है! राग में वर्तते हुए भी जिसे वीतरागी पंचपरमेष्ठी भगवन्तों के प्रति विनय एवं बहुमान का भाव उल्लसित नहीं होता, उसे तो वीतरागी मार्ग की श्रद्धा भी नहीं होती। वीतरागमार्ग की भावनावाले को, जब तक साक्षात् वीतरागता न हो, तब तक वीतरागी पुरुषों के प्रति (पंचपरमेष्ठी आदि के प्रति) परम भक्ति-विनय-उत्साह-बहुमान का भाव अवश्य आता है; तथापि उसमें जो राग है, वह कहीं तात्पर्य नहीं है; वह मोक्षमार्ग नहीं है; मोक्षमार्ग तो वीतरागभाव ही है—ऐसा नियम है; और वही मोक्षाभिलाषी का कर्तव्य है; उसी के द्वारा वह भवसागर से पार होकर परमानन्दरूप मोक्षपद को प्राप्त करता है।

वीतरागी मोक्षमार्ग की जय हो।

वीतरागी मोक्षमार्ग के उपासक एवं उपदेशक संतों की जय हो!

साभार : आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष-१६, अंक-६

महावीर स्वामी के मोक्षधाम में
गुरुदेव का प्रवचन

[पावापुरी-तीर्थधाम की यात्रा के अवसर पर,
पूज्य श्री कानजीस्वामी का भक्तिपूर्ण प्रवचन]
(फाल्गुन शुक्ला २, रविवार)

देखो, इस पावापुरी धाम से भगवान महावीर ने मोक्ष प्राप्त किया था। देह से पार ज्ञानानन्दतत्त्व का भान तो पहले से था ही, और ऐसे भानसहित जन्म धारण किया था। पश्चात् चारित्रदशा प्रगट की और वैशाख शुक्ला दसवीं के दिन भगवान को केवलज्ञान हुआ। केवलज्ञान के पश्चात् तीस वर्ष तक सहजरूप से बिना इच्छा के विहार करते रहे और दिव्यध्वनि खिरी.... फिर इस पावापुरी में पधारे और अन्तिम देशना के बाद योगनिरोध करके यहाँ से भगवान ने मोक्ष प्राप्त किया। उस मोक्षस्थान के ठीक ऊपर समश्रेणी में वे इस समय भी सिद्धभगवान के रूप में विराजमान हैं।

भगवान सर्वज्ञ थे, वीतराग थे और हितोपदेशी थे। उन्होंने हितोपदेश में क्या दिया ? —जिससे आत्मा का परमहित हो, ऐसा उपदेश भगवान ने दिया है। भगवान स्वयं तो सर्वज्ञ-वीतराग हुए और अपने आत्मा का परम हित साध लिया; पश्चात् जो दिव्यवाणी निकली, उसमें भी ऐसे हित का ही उपदेश आया कि अहो आत्मा! तेरा आत्मा भी एक क्षण में परिपूर्ण ज्ञान-आनन्द से भरा है। हमने जो अनंत ज्ञान-दर्शन-सुख और वीर्य की प्राप्ति की, वह आत्मा की अंतरशक्ति से की है। हमारे और तुम्हारे आत्मा के अंतरस्वभाव में कोई अन्तर नहीं है। आत्मा की क्षणिक पर्याय में जो शुभ-अशुभ वृत्तियाँ हैं, वह विकृति है, वह हित का कारण नहीं है; उस शुभ-अशुभ का अभाव करके हमने अपना पूर्ण हित साधन किया है, इसलिये प्रथम ऐसा निर्णय कर कि मैं जो हित प्राप्त करना चाहता हूँ, वह मेरे आत्मा की शक्ति में से ही आयेगा; कहीं बाहर से नहीं।—इसप्रकार स्वभावसन्मुख होने का जो परम हितोपदेश सर्वज्ञ भगवान ने दिया, उसी से उनकी महत्ता है।

आद्य स्तुतिकार स्वामी समन्तभद्र कहते हैं कि—'हे भगवान! आप मोक्षमार्ग के नेता हैं, हितमार्ग के प्रणेता हैं; कर्मरूपी पर्वत का छेदन करनेवाले तथा विश्व के समस्त तत्त्वों के प्रत्यक्ष ज्ञाता हैं। ऐसे गुणों की प्राप्ति के लिये आपको वंदन करता हूँ—ऐसे गुणों द्वारा आत्मा की स्तुति करता हूँ।'

तब मानों भगवान उनसे पूछते हैं कि—'हे भद्र! तुमने स्तुति में इस समवसरण का, देवों के आगमन का, आकाश में गमन का, इस चमर-छत्रादि दिव्य वैभव का स्तवन तो नहीं किया!!'

समन्तभद्रस्वामी भगवान को उत्तर देते हुए कहते हैं कि हे नाथ! क्या यह देवों का आगमन, आकाश में गमन तथा छत्र-चमरादि वैभव के कारण आप मुझे पूज्य हैं? क्या इनके कारण आपकी महानता है??—नहीं-नहीं प्रभो! यह सब तो मायावी इन्द्रजाल वाले भी दिखा सकते हैं। हे नाथ! हम तो आपके गुणों को पहिचान कर उसके द्वारा आपकी स्तुति करते हैं।

देवागम - नभोयान - चामरादिविभूतयः।
मायाविष्वपि दृश्यन्ते, नातस्त्वमसि नो महान्॥

हे नाथ! यह समवसरण का वैभव, यह देवों का आगमन, यह आकाश में विहार—इनके द्वारा हम आपकी महत्ता नहीं मानते;—ऐसा तो मायावी भी बतला सकते हैं। हे नाथ! हम तो आपके परम हितोपदेश द्वारा आपकी सर्वज्ञता और वीतरागता का परीक्षा द्वारा निर्णय करके उसी से आपकी महत्ता मानते हैं।—

मोक्षमार्गस्य नेतारं, भेत्तारं, कर्मभूभृताम्।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां, वन्दे तद्गुरुलब्धये॥

देखो, यह भगवान की स्तुति! जिसप्रकार नदी के प्रवाह में तरंगें उठती हैं; उसीप्रकार ज्ञानी के हृदय में सम्यग्ज्ञान का प्रवाह चलता है; उसी में यह भक्तिरूपी तरंगें उठती हैं। ज्ञानी की स्तुति भी भिन्न प्रकार की होती है। भगवान को पहिचानकर, उनके कथन की परीक्षा करके वे भगवान की स्तुति करते हैं; अकेला पुण्य का ठाठ हो, उसकी महत्ता नहीं है। अरे! ज्ञानी-धर्मात्मा तो ऐसा विचार करते हैं कि इन्द्रपद या चक्रवर्तीपद की प्राप्ति

हो, वह भी पुण्य का फल है—राग का फल है; उस वैभव के उपभोग में तो पापवृत्ति है; उसमें कहीं चैतन्य का सुख नहीं है। इन्द्र का या चक्रवर्ती का वैभव पूर्व पुण्य के उदय से प्राप्त हुआ, वहाँ धर्मी को उसका आदर नहीं है—उसकी रुचि नहीं है। चैतन्य के अतीन्द्रिय आनन्द का ही आदर है, उसी की मिठास है। भगवान ने आत्मा के ऐसे आनन्दस्वभाव की ओर सन्मुख होने का उपदेश किया है। इस समय तो भगवान वाणी रहित हो गये हैं और सिद्धपद में विराजमान हैं; वहाँ प्रतिक्षण आनन्द की नवीन पर्याय का अनुभव करते हैं।

चैतन्य के अतीन्द्रिय आनन्द का अनुभव करनेवाले ज्ञानी-संतों को इन्द्रिय विषयों की ओर झुके हुए जीवों के प्रति दयाभाव उत्पन्न होता है। चैतन्यस्वभाव के अनुभव बिना अन्य कोई मोक्ष का साधन नहीं होता। बीच में पूजा-भक्ति की शुभवृत्ति भले आये, किन्तु वह कहीं मोक्ष का साधन नहीं होती। शुभाशुभ वृत्तियाँ उस स्वभाव के कोष में से नहीं आतीं; स्वभाव में तो ज्ञान-आनन्द का भंडार है। ऐसे आनन्दस्वभाव का जिसे भान हुआ है, उसे चक्रवर्ती और इन्द्रों पर भी दया आती है। चक्रवर्तीपद, इन्द्रपद आदि महान पदवियों का बंध तो सम्यग्दर्शन की भूमिका में ही होता है, किन्तु धर्मी को उन पदों की प्रीति नहीं है; चैतन्य की प्रीति के समक्ष, जगत के किसी वैभव की प्रीति वह नहीं रखता। ऐसे सम्यग्ज्ञान के बिना जीव ने राग की रुचि से अनन्तबार मुनिव्रत का पालन किया किन्तु उसका किंचित् हित नहीं हुआ।

'मुनिव्रतधार अनंतबार ग्रीवक उपजायो,
पै निज आतमज्ञान बिना सुख लेश न पायो।'

जब भगवान यहाँ से मोक्ष पधारे, तब स्वर्ग से इन्द्रों ने आकर मोक्षकल्याणक मनाया था। इस समय भी वे इन्द्र स्वर्ग में विराज रहे हैं और वही यह भूमि है। भगवान यहाँ से मोक्ष पधारे; गौतमस्वामी ने यहाँ केवलज्ञान प्राप्त किया और यहाँ से तेरह मील दूर गुणावा से मोक्ष में गये। जिसे ऐसे केवलज्ञान और मोक्षपद की प्रीति है, वह बारम्बार उनका स्मरण करता है, और इसप्रकार अपने अंतर की चैतन्यऋद्धि का स्मरण करके

उसकी भावना भाता है। सम्यग्दृष्टि कैसा होता है ?—तो कहते हैं कि—

'रिद्धि सिद्धि वृद्धि दीसे घट में प्रगट सदा,
अंतर की लक्ष्मी सों अजाची लक्षपति है;
दास भगवन्त के उदास रहें जगत् सों,
सुखिया सदैव ऐसे जीव समकिती हैं।'

सम्यक्त्वी धर्मात्मा जगत से उदास हैं; अंतर की चैतन्यऋद्धि का उन्हें भान है और प्रतिक्षण पर्याय में ज्ञान-आनंद की ऋद्धि-वृद्धि होती जाती है; जगत से उन्हें सुख की आशा नहीं है, इसलिये जगत से उदास हैं और भगवान के दास हैं। उन्हें भान है कि हमारा सुख हमारे स्वभाव में है। —इसप्रकार अंतर की लक्ष्मी से सम्यक्त्वी जीव सदैव सुखी है।

सीताजी की अग्निपरीक्षा के पश्चात् जब रामचन्द्रजी उनसे अयोध्या चलकर राजभवन में रहने का आग्रह करते हैं, तब सीताजी वैराग्यपूर्वक कहती हैं कि—अरे! इस संसार का स्वरूप हमने देख लिया है। वह पटरानी पद हमें नहीं चाहिये। हम तो अब अर्जिका बनकर चैतन्यानन्द की साधना करेंगे। देखो, सम्यक्त्वी को पहले से ही आत्मा के आनन्द का भान है और राजपद को तुच्छ समझता है। सीताजी कहती हैं कि—अब तो हम अपने चैतन्य की निर्मल परिणति को पटरानी पद पर स्थापित करेंगे, यह बाहरी पटरानी पद अब हमें नहीं चाहिये। उसमें कहीं स्वप्न में भी सुख नहीं है। ज्ञानियों को जगत के किसी पदार्थ में सुख भासित नहीं होता; इन्द्रपद, चक्रवर्तीपद या पद्मिनी स्त्री में कहीं भी सुख नहीं है; एक चैतन्यपद में ही सुख है। अहा, चैतन्य के अनन्त सुखमय ऐसा मोक्षधाम भगवान ने यहाँ से प्राप्त किया; उसी की सबको भावना करनेयोग्य है—

पूर्व प्रयोगादि कारणना योगथी,
ऊर्ध्वगमन सिद्धालय प्राप्त सुस्थित जो...
सादि-अनंत अनंत समाधिसुखमाँ,
अनंत दर्शन ज्ञान अनंतसहित जो।
अपूर्व अवसर अेवो क्यारे आवशे ?

साभार : आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष -१६, अंक-६

श्री समयसार नाटक पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के
धारावाही प्रवचन

द्वितीय अधिकार

काव्य – 5 पर प्रवचन

अहा ! बहुत मक्खन जैसी सूक्ष्म बात है।

'जब चेतन सँभारि निज पौरुष' अज्ञानी अनादि से शरीर, इन्द्रिय, मन, वाणी आदि को ही सँभालता था कि 'यह मैं हूँ, –यह तो अज्ञान था। जब आत्मा अपने पुरुषार्थ से अपने ज्ञानस्वभाव, दर्शनस्वभाव, आनन्दस्वभाव को सँभाल लेता है, तब वह ज्ञानी होता है। धर्म की कला ही कोई अलग है, परन्तु लोगों के पास तो विपरीत प्रकार से बतायी हुई है।

अपने वीर्य (पुरुषार्थ) को अपनी तरफ झुकाने पर स्वभाव का सँभालना होता है, स्वभाव की यादगिरी होती है। वर्तमान ज्ञान की दशा को स्वभाव सन्मुख झुकाना ही पुरुषार्थ है।

'निरखै निज दृग सौं निज मर्म।' –अपने ज्ञाननेत्र से अपने असली स्वरूप को पहिचानता है। कब ? कि जब उस असली ज्ञानानन्द स्वभाव के सन्मुख होकर स्वभाव को याद करता है, तब उस असली स्वभाव को परख लेता है। बाहर से व्रत, तपादि जड़ की क्रिया करने से आत्मा नहीं पहिचाना जाता है। जीव अज्ञानदशा में शरीर की ऐसी क्रिया करके 'मैं धर्म सँभालता हूँ'– ऐसा मानता था। वह अब निज नेत्र द्वारा स्वयं को निहारने से धर्म का असली स्वरूप उसकी दृष्टि में आता है।

शुभ उपयोग को तो अचेतन कहा है और उसी को व्यवहार से निश्चय का साधन कहा है। वस्तुतः बात तो यह है कि अपना स्वभाव ही अपना साधन होता है, तब उसकी भूमिका में शुभोपयोग कैसा और कितनी जाति का होता है –यह बतलाने के लिए उसको साधन की उपमा देकर (उपचार से साधन) कहा जाता है।

'तब सुखरूप विमल अविनासिक, जानै जगत सिरोमनि धर्म' –धर्मी

अपने स्वभाव-सन्मुखता के पुरुषार्थ से अन्तर में निरखते ही सुखरूप, विमल और अविनाशी स्वरूप को देखता है।

मैं तो अतीन्द्रिय आनन्द और सुखरूप हूँ। मेरा सुख निर्मल और अविनाशी है- ऐसा धर्मी अनुभव करता है। अज्ञानदशा में विकल्प में चैतन्यपने का भास होता था कि 'यह विकल्प है, वही आत्मा हैं' वह भास अब नहीं रहता है। धर्मी को जड़ और चेतन की भिन्नता भासित होने पर आत्मा का स्वभाव ध्रुव, निर्मल और आनन्दरूप ज्ञात होता है। तभी उसको धर्मी कहते हैं।

धर्मी को आत्मा का अनुभव होने पर ऐसा ज्ञात होता है कि आत्मा का स्वभाव तो जगत का शिरोमणि है। दया, दानादि के विकल्प से तो आत्मा का धर्म भिन्न है। विकल्परूप व्यवहार को तो यहाँ अचेतन कह दिया है। जो स्वयं अचेतन है वह चैतन्य में क्या मदद करेगा ?इसको अचेतन में चेतनपने की बुद्धि से ही चौरासी के अवतार में परिभ्रमण करना पड़ा है। अहो ! संसार में परिभ्रमता हुआ जीव कैसे-कैसे दु:ख पाता है। जन्म के दु:ख, जरा के दु:ख, मरण के दु:ख, रोग के दु:ख...दु:ख का जहाँ पार नहीं- ऐसे क्लेश से जो भिन्न है उस स्वभाव को सँभालते ही इसको ज्ञान और सुख का अनुभव होता है। वह अपने को लोक का शिरोमणि जानता है।

'अनुभौ करे शुद्ध चेतन कौ' - एकबार आत्मा का अनुभव होने के पश्चात् उसको कायम टिका रखना ही करने का है, यही धरने का है। आगरा में एक पण्डित ने कहा था कि तुम्हारे तो करना-धरना कुछ है नहीं... । अरे भाई ! राग के विकल्प से आत्मा को भिन्न करना और भिन्न धार रखना -यह करना धरना नहीं है क्या ? इसको तो विकल्प करना ही करने योग्य कार्य लगता है। इसने अनन्त काल से आत्मा की बात को ज्ञान में नहीं लिया है इस कारण कठिन हो गई हैं।

'रमै स्वभाव वमै सब कर्म' -अपने निजानन्द में रमे तो कर्म और राग-द्वेष को वमे। मार्ग तो ऐसा है; परन्तु जीव मिथ्यामार्ग में ठगा गये हैं; क्योंकि वहाँ सोने का वर्क लगाकर पत्थर परोसा गया है, चाँदी का वर्क

लगाकर चूहे की विष्टा परोसी गई है। वह ऊपर से तो गोल-गोल सुन्दर दिखती है, अतः अच्छी लगती है; परन्तु खाने पर पता पड़ता है कि यह तो विष्टा है। उसीप्रकार अन्य मतों ने विकार पर, क्रिया का रंग चढ़ाकर धर्म परोसा है। उसको गहराई से समझने पर ख्याल में आता है कि यह तो जड़-विकार है। धर्म तो उसको कहते हैं कि जिसमें जितना रमे, उतना कर्मों का नाश होता जाये। कर्मों का नाश क्रियाकाण्ड करने से नहीं होता है।

'इह विधि सधै मुक्ति कौ मारग' स्वभाव सन्मुख होकर स्वभाव का अनुभव करने से और उसमें रमने से मुक्ति का मार्ग सधता है और कर्मों का नाश होता है।

अहो! आत्मा तो सिद्धगिरि है। आत्मा तो अनंत सिद्ध दशाओं का संग्रहालय है। जो आत्मा की सिद्धगिरि पर जाये वह सुखी होता है; अन्यथा सिद्धगिरि की यात्रा करने से सिद्धि होवे -ऐसा नहीं है। जिनदेव तनमन्दिर में है। शरीररूपी मन्दिर में आत्मारूपी देव विराजमान है, इसलिए वही तीर्थ है। निजतीर्थ को नहीं जाने और बाहर के तीर्थों में भटका करे, तो उससे आत्मा का कल्याण नहीं होता है। आत्मा का भान होने के पश्चात् तीर्थयात्रा का विकल्प आवे, वह अलग बात है; परन्तु वास्तविक सिद्धगिरि ऐसी आत्मा के भान बिना सच्ची यात्रा नहीं होती है। भगवान आत्मा के निर्विकल्प स्वभाव पर आरूढ़ होना ही सच्ची यात्रा है।

'अरूसमीप आवै सिव सर्म' -शिव अर्थात् मोक्ष और शर्म अर्थात् सुख। जीव अन्तर स्वभाव सन्मुखता से निकट काल में मुक्ति प्राप्त करता है। देखो! निकट काल में मुक्ति होती है ऐसा कहा है, तो क्रमबद्ध कहाँ रहा ऐसा प्रश्न उत्पन्न होता है; उसका उत्तर यह है कि जो आत्मा के सन्मुख होता है, उसका मुक्ति जाने का काल अल्प ही होता है। उसको अल्पकाल में ही केवलज्ञान की प्राप्ति होती है। आनन्द की उर्मियाँ आती हैं।

'जो-जो देखी वीतराग ने, सो-सो होसी वीरा रे।
अनहोनी कबहुँ नहीं होसी, काहें होत अधीरा रे।

जिसकी प्रतीति में वीतराग और सर्वज्ञदशा आती है वही यह बात मान सकता है। मात्र शब्दों में अथवा धारणा में लेने से बात मानी नहीं कही जाती। जिनकी दशा में वीतरागता और सर्वज्ञता प्रकटी है, वे यह सब जानते हैं; परन्तु इस बात का निश्चय इस जीव को कब आता है?कि जब यह ज्ञायकस्वभाव के सन्मुख होता है, तभी यह बात इसकी श्रद्धा में बैठती है।

अब पाँचवें श्लोक का छठवाँ काव्य कहते हैं :-

जड़-चेतन की भिन्नता

वरनादिक रागादि यह, रूप हमारौ नांहि।
एक ब्रह्म नहि दूसरौ, दीसै अनुभव मांहि ।।6।।

अर्थः- शरीर सम्बन्धी रूप, रस, गंध, स्पर्श आदि वा राग-द्वेष आदि विभाव सब अचेतन हैं, ये हमारे स्वरूप नहीं हैं; आत्मअनुभव में एक ब्रह्म के सिवाय अन्य कुछ नहीं भासता।।

काव्य - 6 पर प्रवचन

अरे! अभी तो ऐसे स्वरूप की बात भी घिस गई है -रही नहीं है। अरे! अनुभव के बिना भव का अंत नहीं आयेगा। प्रभु! अनुभव के बिना क्रिया करे और लोग महिमा करके चढ़ा दें -इसमें तेरा हित नहीं है। भाई! यह तुझको शरण नहीं होगा।

वर्णादि अर्थात् शरीर सम्बन्धी वर्ण, रस, गंध, स्पर्श आदि सब जड़ हैं और रागादि सर्व विभाव भी अचेतन हैं। भले ही वह आत्मा की पर्याय में होता है; परन्तु वह विभाव है, इसलिए आत्मा का भाव नहीं है। निश्चय से वह आत्मा की पर्याय नहीं है, पुद्गल की पर्याय है। यह बात किसके लिए है? कि जिसको राग और आत्मा भिन्न भासित हुए हैं, उसको राग, यह पुद्गल की पर्याय है। अभी जिसको राग से आत्मा की भिन्नता भासित नहीं हुई है, उसको 'राग तो पुद्गल है और मोह नाचो तो भले नाचो' यह बात नहीं होती है; क्योंकि अभी तो उसकी दृष्टि ही राग पर पड़ी है, राग से भिन्न नहीं पड़ा, तो नाचनेवाला भिन्न पड़े बिना नाच को भिन्न कहाँ से जानेगा?

जैसे घर में करोड़ रुपये हों और इकलौता पुत्र हो, उसका विवाह किया और छह महीने बाद पता पड़े कि उसके तो कैन्सर है, मरण के किनारे आ गया है। तो उस घर में कैसी उदासी छा जाती है?लग्न में दस लाख खर्च करके बरोठी (प्रीतिभोज) किया हो, बहू पाँच लाख का दहेज लायी हो, विवाह के पूर्व कितने प्रेम से लड्डू खिलाये हों; परन्तु उसका एक अंशमात्र भी उत्साह अब दिखता है?अकेली उदासी..उदासी के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं दिखता। उसीप्रकार आत्मा में राग-द्वेषादि तो मर गये हैं, अर्थात् उनमें कुछ सार नहीं हैं ऐसा जानते ही उदासी छा जाती है। पहले अज्ञान की उदासी थी और (अब) उसमें वैराग्य की उदासी आ जाती है। भगवान आत्मा के अपने पंथ में चढ़ने पर उसको सम्पूर्ण दुनिया से वैराग्य..वैराग्य..उदासी छा जाती है।

वर्णादि और राग-द्वेषादि सब अचेतन हैं। भगवान आत्मा की प्रतीति आने पर यह सब अचेतन भासित होता है। व्यवहार रत्नत्रय भी अचेतन है, भगवान की भक्ति का राग भी अचेतन है। बापा! तेरा मार्ग निराला है भाई! अरे! शास्त्र का पठन-ज्ञान भी विकल्प और परलक्ष्यी होने से जड़ है। उससे आत्मा की प्राप्ति होना माननेवाले मूर्ख हैं। योगीन्दुदेव ने कहा है कि- 'शास्त्र पाठी भी मूर्ख है, जो निजतत्त्व अजान..। (योगसार) परलक्ष्यी ज्ञान यदि वास्तविक ज्ञान होवे तो उसके साथ आनन्द होना चाहिए। उसमें आत्मा का आनन्द नहीं है; अतः वह वस्तुतः जड़ है।

'एक ब्रह्म नहीं दूसरो, दीसे अनुभव माहिं' -आत्मा के अनुभव में अकेला ब्रह्मानन्द स्वरूप आत्मा ही अनुभवगोचर होता है, उसमें अन्य किसी का अनुभव नहीं है। वहाँ व्यवहार का अनुभव भी नहीं है।

लोगों को ऐसा लगता है कि पहले ही से ऐसी ऊँची बात करते हैं; परन्तु जैसे पहले बालक को चलना सिखाने के लिए 'चालनगाड़ी' देते हैं, -ऐसी व्यवहार की 'चालनगाड़ी' तो हमको दो! भाई! आत्मा का अनुभव करना 'चालनगाड़ी' देते हैं, यही प्रथम धर्म है। भगवान आत्मा के सन्मुख होकर अनुभव करनेवाले ने ही पहला पैर धरा है, वही चलते-चलते आगे बढ़कर केवलज्ञान प्राप्त करेगा। क्रमशः

भगवान 'सन्मति' का अध्यात्म 'सन्देश'

श्री अध्यात्मरत्न ब्र० कस्तूरचन्दजी नायक

[भगवान सन्मति (महावीर) ने अपने सन्देश में कहा कि जब तक प्राणी इन भौतिक पदार्थों से अलग अपनी आत्मशक्ति पर लक्ष्य नहीं देगा, तब तक उसका कल्याण असम्भव है। आत्मा की सन्मुखता ही आत्मा को परमात्मत्व की ओर ले जाती है। उस आत्मा की सन्मुखता लाने को 'अध्यात्म विज्ञान' का समझना परमावश्यक है। उसी अध्यात्म विज्ञान की थोड़ी सी झलक यहाँ देखिये।]

द्रव्य की स्वतन्त्र सत्ता

अनादि कालीन, लोकाकाश में षट्द्रव्यों का सम्मेलन होते हुए भी प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने स्वभाव को नहीं छोड़ रहा है, किन्तु जीव और पुद्गल अपनी-अपनी वैभाविकीय शक्ति के वैभाविक परिणमन द्वारा एक दूसरे का निमित्त बनकर भी अपनी स्वाभाविक सत्ता को नहीं छोड़ते। जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण हमारा वर्तमान पर्याय का जीवन ही बता रहा है कि हम पुद्गल का निमित्त पाकर अनादिकाल से वैभाविक परिणमन करते चले आ रहे हैं; उस पर भी हमारा एक भी प्रदेश पुद्गलरूप नहीं हुआ। इसी तरह से पुद्गल का भी एक प्रदेश हमारे आत्मीय प्रदेशरूप नहीं हुआ। इससे निष्कर्ष यह निकला कि हम कितने भी वैभाविक प्रवाह में बहते चले जावें परन्तु हम अपने असंख्यात प्रदेशीय अस्तित्व को मिटा नहीं सकते। इतना होते हुए क्यों नहीं हम अपने स्वाभाविक परिणमन में स्थिर होते हैं ? इसी भूल को सुधारने का 'सन्मति भगवान दिव्य सन्देश' देते हैं कि हे भाई ! तू इस दुर्लभ चिन्तामणिरत्न के समान मनुष्य पर्याय को पाकर वृथा मत खो। हम भी तुम्हारे समान अनादिकाल से इस वैभावकीय परिणमन में बहुत रुलते चले आये हैं। परन्तु जब हमने अपने स्वाभाविक परिणमन को सम्हाला तब ही हम भगवान महावीर बनें। इससे हे संसारी दुःखी 'जीव' तू भी अपनी स्वाभाविक सम्पत्ति को सम्हाल कर हमारे समान भगवान और सच्चा महावीर बन जा। इससे कहा है—

जो जन सदा पराये मुख को, खड़े-खड़े ही तकते हैं।
उनके हाथ न कुछ भी आता, और न कुछ कर सकते हैं॥

सत्य प्रकाश

कितना सुन्दर भाव है जो कि सत्यरूप से हमारे जीवन पर घटित होता है। हमने भगवान महावीर की कितनी जयन्ती मनाईं और कितने निर्वाण कल्याणक मनाये। किन्तु हमारी वैभाविकीय जीवन की बागडोर रंचमात्र न मुड़ी। जिस प्रकार म्युनिसिपालटी का मीलवाला पत्थर इस बात की सूचना देता है कि तुम 100 या 200 मील पर आ गये किन्तु वह पत्थर जहाँ का तहाँ है।

इससे निष्कर्ष यह निकला कि जब तक हम भगवान महावीर के 'सन्मति सन्देश' (सम्यग्ज्ञान की वाणी अथवा महावीर की वाणी) को नहीं अपनायेंगे तब तक, अनन्त पर्यायों में दु:खी होते चले आये और अब भी दु:खी होते चले जावेंगे। इससे हे दु:खी प्राणी! अपने जीवन पर सत्य प्रकाश डाल, अर्थात् अपने स्वाभाविक परिणमन में रम जा। वह इस प्रकार कि हम अपने मन, वचन, काय को अपने स्वरूप के सम्हालने की ओर लगा देवें जिस प्रकार भगवान महावीर ने लगाया। पंच पाप कुभावों रूपी ईंधन को रत्नत्रयरूपी अग्नि प्रज्वलित करते हुए, अपने आत्मस्वरूपी सुवर्ण को तपाया, जिससे निर्मलता प्रगट हुई जिसमें कल्पान्तकाल तक कर्मरूपी कालिमा नहीं लग सकती। कोई कहे कि भगवान महावीर के समान साक्षात् रत्नत्रय को क्या हम भी प्राप्त कर मोक्ष पा सकते हैं ?

अहो भव्यजन! यदि आप साक्षात् श्रेणी मांडकर मोक्ष नहीं जा सकते तो भी इतनी श्रद्धा तो लाओ कि वास्तव में हमारी आत्मा भौतिक वातावरण में निरन्तर मग्न रहकर अपनी आत्मीय स्वाभाविक परिणति को भूली हुई है इतनी सुधि आते ही हम भी भगवान महावीर के समान श्रद्धा और ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं, अब रहा चारित्रगुण। इसको भी शक्ति प्रमाण धारण करें।

शेष पृष्ठ 28 पर.....

भगवान महावीर और जैनधर्म

श्री डॉ० फेलिक्स वाल्यी, हंगरी

[आज पाश्चात्य विद्वानों में वह बात बहुमत से मान्य हो चुकी है कि भगवान महावीर संसार के महान विचारकों में अग्रणीय हैं। यहाँ तक कि यद्यपि बुद्ध और उनके अनुयायियों का जैनधर्म से मनोवैज्ञानिक एवं चिन्तन में अन्तर रहा है फिर भी उन्होंने महावीर को संसार की एक अलौकिक विभूति माना है।]

आत्म स्वातन्त्र का उद्घोषक जैनधर्म

मुझे अत्यन्त हर्ष है कि आप लोगों ने मुझ विदेशी को, जैनधर्म जैसे गम्भीर धर्म पर अपने विचार प्रकट करने का सुअवसर प्रदान किया।

पाश्चात्य जगत में अभी तक जैन धर्म के अध्ययन के विषय में उपेक्षा सी रही है। परन्तु अब कुछ पाश्चात्य विद्वानों का ध्यान इस ओर गया है, जिन्होंने कि जैनधर्म और बौद्धधर्म की विशेषताओं के साथ उनका पारस्परिक मौलिक अन्तर भी बताया है। जर्मनी के विद्वान जेकौवी बाल्टर, शूचिंग, हेल्मुठ फॉन ग्लासनांफा आदि पश्चिमीय विद्वान उल्लेखनीय है।

बौद्धधर्म, जैनधर्म से ही मूल प्रेरणा लेकर बढ़ पाया; वह जैनों के आत्मसुख एवं जैनेतरों के बलिदान का मध्यवर्ती समन्वित रूप है। भगवान महावीर और महात्मा बुद्ध को इतिहास से अलग नहीं किया जा सकता। ये दोनों ही भारत के उच्च कोटि के सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक स्वर के स्तम्भ रहे हैं। इन विभूतियों ने वैदिक युग से आती हुई मानव की परम्परागत दासता को निरर्थक सिद्ध करके मनुष्य के 'आत्म स्वातन्त्र्य' पर जोर दिया है।

व्यक्ति स्वातन्त्र का प्रतीक

योग के विषय में भी मेरा विचार है कि समस्त भारतीय धर्म, योग की आधारशिला पर ही आधारित है। एवं योग ने ही विश्व के सांस्कृतिक विकास में एक महान भाग लिया है। जैनधर्म की मूल भावना निश्चय ही साधनामय योग है। व्यक्तिगत साधना पर जैनधर्म में बहुत जोर दिया गया है। आत्मानुशासन योग, साधना द्वारा ही होता है। दु:ख है कि आधुनिक युग में योग का दुरुपयोग हुआ है और वह अब केवल, प्रदर्शन की वस्तु रह गई

है। वास्तविक योग तो जैन धर्म ही है। इसमें शरीर और मन दोनों के नियन्त्रण का ध्यान रखा गया है। यही योग जैनधर्म से आगे चलकर सब धर्मों में समा गया है। आज उसे हम 'जैन चारित्र' के नाम से पुकारते हैं। वर्तमान ऐतिहासिक खोजों ने जैनधर्म की प्राचीनता पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। वह भारत का आदि धर्म है। वैदिक आर्य भारत में आये भी नहीं थे कि उससे पहले यहाँ जैनों की अहिंसा, लोक कल्याण कर रही थी।

त्याग भावना की सर्वोच्चता

मेरे प्रिय मित्र स्व० हेनरी जिम्मर ने भारतीय दर्शनों का गहरा अध्ययन किया था। उन्होंने ही मुझे जैनधर्म का अध्ययन करने के लिये प्रेरित किया। उन्होंने बताया कि प्राचीन भारत का पथप्रदर्शक जैनधर्म रहा है। भगवान पार्श्वनाथ के बहुत पहले से जैनधर्म, भारत में सच्चे योग का प्रचार कर रहा था। प्रो० जिम्मर ने 'भारतीय दर्शनों' पर जो पुस्तक लिखी है उसमें भगवान पार्श्वनाथ के पूर्वभवों का रहस्योद्घाटन करके योगचर्या के विकास पर प्रकाश डाला है। योग साधना के विषय में विद्वानों में मतभेद हो सकता है, किन्तु यह एक स्वीकृत सत्य और तथ्य है कि जैनधर्म की त्याग भावना की उच्चता तक, कोई भी अन्य धर्म नहीं पहुँच सकते हैं।

अहिंसा ही विश्व शान्ति में समर्थ

जैनों का नैतिक स्तर शताब्दियों तक भारत में अपनी विशेषता के लिए प्रसिद्ध रहा है, परन्तु वर्तमान समय में इस नैतिकता का अवमूल्यांकन होने लगा है। सच तो यह है कि जैनधर्म निम्न से निम्नतर व्यक्ति को भी उच्चतम बनने का अवसर देता है। जैनधर्म का मुख्य सिद्धान्त, अहिंसा है। यह अहिंसा मनुष्य में कायरता का संचार नहीं करती, वरन् उसकी आत्मशक्ति को प्रबल और शुद्ध बनाती है। यही कारण है कि जैनधर्म को बहुत समय तक भारत के अनेक राजाओं, मन्त्रियों और सेनापतियों ने अपनाया था।

आज की भटकी हुई मानवता को भी एक दिन अपने अहंभाव को भूलकर और व्यक्तिगत स्वार्थों को तिलांजलि देकर जैनधर्म की अहिंसा के चरणों में ही आना होगा और तब ही विश्व शान्ति सम्भव होगी। ●

गतांक से आगे

श्रुत परम्परा एवं श्रुतज्ञान का स्वरूप

शुद्ध—वचन और अर्थगत दोषों से रहित होने के कारण, सिद्धान्त का नाम शुद्ध है।

सम्यग्दृष्टि—इसके द्वारा जीवादि पदार्थ सम्यक् प्रकार से देखे जाते हैं अर्थात् जाने जाते हैं, इसलिए इसका नाम सम्यग्दृष्टि श्रुत है। इसके द्वारा जीवादिक पदार्थ सम्यक् प्रकार से देखे जाते हैं अर्थात् श्रद्धान किए जाते हैं, इसलिए इसका नाम सम्यग्दृष्टि है अथवा सम्यग्दृष्टि के साथ श्रुति का अविनाभाव होने से उसका नाम सम्यग्दृष्टि है।

हेतुवाद—जो लिंग, अन्यथानुपपत्ति रूप एक लक्षण से उपलक्षित होकर साध्य का अविनाभावी होता है, उसे हेतु कहा जाता है। वह हेतु दो प्रकार का है - साधन हेतु और दूषण हेतु। इनमें स्वपक्ष की सिद्धि के लिए प्रयुक्त हुआ हेतु, साधन हेतु और प्रतिपक्ष का खण्डन करने के लिए प्रयुक्त हुआ, दूषण हेतु है। अथवा जो अर्थ और आत्मा का 'हिनोति' अर्थात् ज्ञान कराता है, उस प्रमाणपंचक को हेतु कहा जाता है, वह श्रुतज्ञान हेतुवाद कहलाता है।

नयवाद—ऐहिक और पारलौकिक फल की प्राप्ति का उपाय नय है। उसका वाद अर्थात् कथन इस सिद्धान्त के द्वारा किया जाता है, इसलिए यह नयवाद कहलाता है।

प्रवरवाद—स्वर्ग और अपवर्ग का मार्ग होने से रत्नत्रय का नाम प्रवर है। उसका वाद अर्थात् कथन इसके द्वारा किया जाता है, इसलिए इस आगम का नाम प्रवरवाद है।

मार्गवाद—जिसके द्वारा मार्गणा किया जाता है, वह मार्ग अर्थात् पथ कहलाता है। वह पाँच प्रकार का है - नरकगति मार्ग, तिर्यग्गति मार्ग, मनुष्यगति मार्ग, देवगति मार्ग और मोक्षगति मार्ग। उनमें से एक-एक मार्ग

कृमि, की आदि के भेद से अनेक प्रकार का है। ये मार्ग और मार्गाभास जिसके द्वारा कहे जाते हैं, वह सिद्धान्त मार्गवाद कहलाता है।

श्रुतवाद—श्रुत दो प्रकार का है—अंग प्रविष्ट और अंग बाह्य। इसका कथन, जिस वचन-कलाप के द्वारा किया जाता है, वह द्रव्यश्रुत, श्रुतवाद कहलाता है।

परवाद—मस्करी, कणभक्ष, अक्षपाद, कपिल, शौद्धोदान, चार्वाक, जैमिनि आदि तथा उनके दर्शन जिसके द्वारा 'परोद्यन्ते' अर्थात् दूषित किए जाते हैं, वह राद्धान्त (सिद्धान्त) परवाद कहलाता है।

लौकिकवाद—जिसमें जीवादि पदार्थ देखे जाते हैं अर्थात् उपलब्ध होते हैं, उसे लोक कहते हैं। वह लोक तीन प्रकार का है—ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोक। जिसके द्वारा इस लोक का कथन किया जाता है, वह सिद्धान्त लौकिकवाद कहलाता है।

लोकोत्तरीयवाद—लोकोत्तर पद का अर्थ अलोक है, जिसके द्वारा उसका कथन किया जाता है, वह श्रुत, लोकोत्तरीयवाद कहा जाता है।

अग्र्य—चारित्र से श्रुत प्रधान है, इसलिए उसकी अग्र्य संज्ञा है।

प्रश्न—चारित्र से श्रुत की प्रधानता किस कारण से है?

उत्तर—क्योंकि श्रुतज्ञान के बिना चारित्र की उत्पत्ति नहीं होती, इसलिए चारित्र की अपेक्षा श्रुत की प्रधानता है।

अथवा अग्र्य शब्द का अर्थ मोक्ष है। उसके साहचर्य से श्रुत भी अग्र्य कहलाता है।

मार्ग—मार्ग, पथ और श्रुत—ये एकार्थक नाम हैं। किसका मार्ग? मोक्ष का। ऐसा मानने पर 'सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र—ये तीनों मिलकर मोक्ष के मार्ग हैं'—इस कथन के साथ विरोध हेगा, यह भी सम्भव नहीं है, क्योंकि सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र के अविनाभावी द्वादशांग को मोक्षमार्गरूप से स्वीकार किया गया है।

क्रमशः

कवि परिचय

बिबुध श्रीधर

अपभ्रंश भाषा के कवि 'बिबुध श्रीधर' के जीवन के बारे में सन्दर्भ सामग्री बहुत कम उपलब्ध है। डॉ० राजा राम जैन ने विभिन्न, श्रीधर के नाम से ज्ञात कवियों पर विचार करते हुए लिखा है कि 'यह निश्चित है कि पासणाहचरिउ, वड्ढमाणचरिउ, सुकुमालचरिउ एवं भविसयत्तकहा (तथा अनुपलब्ध चंदप्पहचरिउ एवं संतिजिणेसरचरिउ) के कर्ता बिबुध श्रीधर हैं। इसके अनुसार बिबुध श्रीधर का जन्म वि.सं. 1154 के आसपास हुआ तथा उनकी आयु 73 वर्ष की सिद्ध होती है।

'पासणाहचरिउ' तथा 'वड्ढमाणचरिउ' के अनुसार वह गोल्ह (पिता) एवं वील्हा (माता) के पुत्र थे। वे हरियाणा देश के निवासी, अग्रवाल जैन थे। उस समय दिल्ली में राजा अनंगपाल का राज्य था। अनंगपाल द्वारा सम्मानित, अग्रवाल कुलोत्पन्न नट्टल साहु की प्रेरणा से कवि ने 'पासणाहचरिउ' की रचना की। वड्ढमाणचरिउ के आश्रयदाता साहू नेमिचन्द्र जायस (जैसवाल) कुलीन वंशज थे।

चन्द्रप्रभ, शान्तिनाथ, पार्श्वनाथ एवं महावीर के जीवन, चमत्कारी घटनाओं से परिपूर्ण है। अत: वे सामाजिक जीवन में बड़े ही लोकप्रिय रहे हैं। विविध भाषाओं में, विविध कालों में, विविध कवियों ने विविध शैलियों में उनके चरित्रों का अंकन किया है। बिबुध श्रीधर ने अपभ्रंश भाषा में इन चरित्रों को महाकाव्य शैली में रचा। संस्कृत में, महाकवि वीरनन्दि का चन्द्रप्रभचरित (वि.सं. 1032 के आसपास) एवं महाकवि असग (विक्रम की दसवीं सदी) कृत शान्तिनाथचरित पर्याप्त ख्याति अर्जित कर चुके थे। पुष्पदन्त और गुणभद्र की रचनाओं ने एक आदर्श बनाया था। इनसे प्रेरित होकर बिबुध श्रीधर ने रचनाएँ की और आगे के अपभ्रंश कवियों रइधु एवं महिन्दु के लिए एक परम्परा का निर्माण कर दिया। सुकुमाल चरिउ अध्यात्मपरक तथा एकनिष्ठ तपश्चर्या एवं परिषह

सहन का प्रतीक ग्रन्थ (रचना वि.सं. 1208 ई.) है। जबकि भविसयत्त - कहा अध्यात्म एवं व्यवहार के सम्मिश्रण का अद्‌भुत काव्य है। इनकी रचना कवि ने वि.सं. 1230 में की थी। पासणाहचरिउ हस्तलिखित ग्रन्थ आमेर शास्त्र भण्डार जयपुर में सुरक्षित है। कलापक्ष एवं भावपक्ष दोनों ही दृष्टि से यह एक उत्कृष्ट महाकाव्य है। कवि ने इसकी रचना वि.सं. 1189 में की थी। वड्‌ढमाणचरिउ की तीन हस्तलिखित प्रतियाँ उपलब्ध हैं, जो राजस्थान के ब्यावर, झालरापाटन और दूणी के जैन शास्त्र भण्डारों में सुरक्षित हैं। कवि ने इसकी रचना वि.सं. 1190 में की थी।

बिबुध श्रीधर साहित्यकार होने के साथ-साथ इतिहासवेत्ता भी प्रतीत होते हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में कुछ ऐसे ऐतिहासिक तथ्य प्रस्तुत किये हैं, जो गम्भीररूप में विचारणीय हैं। जैसे इलगोत्र और मुनिराज श्रुतसागर तथा ढिल्ली ही दिल्ली का प्राचीन नाम है।

राजा कल्हण की अनेक पीढ़ियों के बाद अनंगपाल तोमर हुए। उनकी इच्छा एक गढ़ बनवाने की हुई। अत: व्यास के मुहूर्त शोधन कर वास्तुशास्त्र के अनुसार उनका शिलान्यास किया और एक कीली गाड़ दी और कहा कि हे राजन! यह जो कीली गाड़ी जा रही है, उसे पाँच घड़ी तक कोई भी न छुए। उसे न उखाड़ने से आपके तोमर वंश का राज्य संसार में अचल रहेगा। व्यास के चले जाने पर अनंगपाल ने जिज्ञासावश वह कीली उखड़वा (ढीली कर दी) डाली। उसके निकलते ही रुधिर की धारा निकल पड़ी। इस पर व्यास ने दु:खी होकर कहा, भविष्य-भाग्य को कोई मेट नहीं सकता। अनंगपाल प्रथम ने जहाँ जिस स्थान पर कीली गाड़ी थी, उसका नाम किल्ली अथवा कल्हनपुर पड़ा। अनंगपाल ने किल्ली-ढिल्ली कर दी तभी से उस स्थान का नाम ढिल्ली हो गया। कालान्तर में यह ढिल्ली ही दिल्ली हो गया। दिल्ली का एक प्राचीन नाम योगिनीपुरा भी बताया है।

मध्यकाल से आज पर्यन्त भारत की राजधानी रहनेवाली दिल्ली की

प्रसिद्धि सर्वप्रथम तोमर राजाओं के समय में हुई। इस वंश का संस्थापक आठवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में राणा बाजू था। उसका अथवा उसके उत्तराधिकारी का नाम अनंगपाल प्रथम था, जिसने 796 ई. में यह नगर बसाया था। इस वंश में कई राजा हुए जो जैनधर्म के प्रति सहिष्णु थे। मदनपाल तोमर, तोमर वंश का दिल्ली का अन्तिम नरेश था।

इतिहास के विद्यार्थी के लिए यह सचमुच कठिन रास्ता है कि भारत के इतिहास को सदैव धार्मिक आग्रह से लिखा गया और इसी कारण निष्पक्ष इतिहास की यहाँ अनदेखी हुई और अब भी हो रही है।

दिल्ली का तोमर नरेश अनंगपाल तृतीय 1132 ई. में गद्दी पर था। उस समय दिल्ली में कई जिन मन्दिर थे। नट्टलसाहु ने दिल्ली में भगवान आदिनाथ का अत्यन्त भव्य कलापूर्ण एवं विशाल मन्दिर निर्माण कराकर उसकी प्रतिष्ठा कराई थी।●●

.....पृष्ठ 21 का शेष

शुद्धता से परमात्मतत्त्व की ओर

इतना बीज बो-लेने पर हमारी आत्मारूपी पृथ्वी में एक न एक दिन, इस पर्याय में हमारा ही अविनश्वर मोक्षरूपी फल भगवान महावीर के समान पल्लवित होगा। उस अमर फल को पा करके कल्पान्तकाल के लिये सुखी हो जावेंगे। यह ही विश्व के लिये भगवान महावीर का दिव्य 'सन्मति सन्देश' है। इस प्रकार श्रद्धा, ज्ञान और चारित्र पर अवलम्बित होना ही हमारा सच्ची जयन्ती का मनाना है, यदि एकबार भी हमारी बीच मझधार पड़ी नैया किनारे पर लग जाये तो हम भी भगवान महावीर बन जावेंगे, इसमें तनिक भी सन्देह और आश्चर्य करने की गुंजाइश नहीं है। कहा भी है—

शुभ कर्म योग सुधार आया, पार हो दिन जात है।

प्रेरक प्रसंग

उदार स्वभाव

पंजाब–केसरी महाराज रणजीत सिंह एक बार कहीं जा रहे थे। अकस्मात् एक ढेला आकर उनके सिर में लगा। सहचरों ने दौड़कर एक बुढ़िया को पकड़ लिया और उसे महाराज के समाने हाजिर करते हुए कहा– ''महाराज! यही बुढ़िया है, जिसने आपको ढेला मारा है।''

बुढ़िया डरते हुए बोली। आखिर यहाँ आने पर मेरी नजर इस वृक्ष पर लगे एक पके हुए फल पर पड़ी। यदि ढेला फल को लगता और वह नीचे गिर पड़ता तो उससे मेरे बच्चे की भूख मिट सकती थी, किन्तु दुर्भाग्य से वह आपको लग गया। मैं निर्दोष हूँ, सरकार! ढेला मैंने आपको मारने के लिए नहीं फेंका था। क्षमा कीजिए अन्नदाता!''

बुढ़िया की बात सुनकर महाराज रणजीत सिंह ने अपने अंगरक्षकों से कहा–''खजाने से एक हजार रूपये और आज के लिए बनाई रसोई में से थाल को सजाकर बुढ़िया माँ के घर भिजवा दो।''

आश्चर्य प्रकट करते हुए अंगरक्षकों ने पूछा– ''महाराज! यह क्या? बुढ़िया को दंड के बदले पुरस्कार कैसा? गंभीरतापूर्वक महाराज रणजीत सिंह ने इसके उत्तर में जो कुछ कहा, वह इतिहास की पुस्तक में सुनहरे अक्षरों में लिखे जाने योग्य है। क्या कहा था? सुनिए–

''भाइयों! जब बिना बुद्धिवाला यह वृक्ष भी ढेला मारने वाले को पका फल दे सकता है, तब मैं बुद्धिवाला होकर भी क्या ढेला मारने वाले को दण्ड दूँ? क्या मैं बुद्धिहीन वृक्ष से भी गया बीता हूँ?

इस उत्तर से सभी लोग महाराज के उदार स्वभाव की प्रशंसा करने लगे।

शिक्षा– उदारता व करूणा बड़प्पन का विशेष चिन्ह है। उदारता पूर्वक किया गया व्यवहार ही प्रशंसनीय होता है। बड़े पुरूष उदारता व धैर्य का परिचय देते हैं, साथ ही वे तात्कालिक घटना मात्र को नहीं देखते, अपितु उसके पीछे के अभिप्राय को भी पकड़ते हैं।

"जिस प्रकार–उसी प्रकार" में छिपा रहस्य

जिस प्रकार– सोने के गहने हो, तो निश्चित रूप से सोना होगा ही होगा, सोने से ही गहने बने है।

उसी प्रकार– विचार भाव हो तो आत्मा निश्चित रूप से है ही है। आत्मा के आधार से ही भाव उठे है, भाव आकाश में से नहीं आये है। अतः हे भव्य तू आत्मा ही है ऐसा निश्चय कर।

जिस प्रकार– कोई मूर्ख धागे के अर्थी, महामणि के हार का धागा निकालने को, महामणियों का चूर्ण करता है।

उसी प्रकार– यह जड़ बुद्धि, विषयों के अर्थ, धर्म रत्न को चूर्ण करता है। (पद्मपुराण 14पर्व)

जिस प्रकार– नमक सदैव सर्वत्र खारा रहता है; गुड़ सदैव सर्वत्र मीठा रहता है; घी सदैव सर्वत्र चिकना रहता है; सूर्य सदैव सर्वत्र प्रकाशवान रहता है; कोयला सदैव काला रहता है।

उसी प्रकार– आत्मा सदैव सर्वत्र ज्ञानवान रहता है।

जिस प्रकार– वर्तमान में अशुद्ध सोना, स्वभाव में शुद्ध है; वर्तमान में अशुद्ध पानी, स्वभाव में शुद्ध है; वर्तमान में अशुद्ध वस्त्र, स्वभाव में शुद्ध है। जो ऐसी श्रद्धा रखता है वहीं इनको वर्तमान में पुरुषार्थ पूर्वक शुद्ध कर देता है।

उसी प्रकर– वर्तमान(पर्याय) में अशुद्ध आत्मा, स्वभाव (द्रव्य) में शुद्ध ही है। ऐसी श्रद्धा रखनेवाला भव्य जीव, पुरुषार्थ पूर्वक पर्याय में भी शुद्धता प्रगट कर लेता है।

जिस प्रकार– बीमार असक्त व्यक्ति को कमजोरी के कारण चलने–फिरने में लाठी का सहारा लेना पड़ता है, पर उसकी भावना यही रहती है कि कब इस लाठी का सहारा छूटे।

उसी प्रकार– निचली दशा में व्यवहार का सहारा लेते हुए भी कोई आत्मार्थी यह नहीं चहाता है कि उसे सदा ही यह सहारा लेना पड़े। वह तो यही चाहता है कि कब इसका आश्रय छूटे और अपने में समा जाऊँ।

जिस प्रकार– तुम्बी को अनेकों तीर्थ नदियों में अथवा समुद्रों में नहलाओ उसका कड़वापन नहीं जाता।

उसी प्रकार– नदियों में, समुद्र में स्नान करने से शरीर भी शुद्ध नहीं होता, तो आत्मा तो कैसे शुद्ध होगी? उसके लिए तो रत्नत्रय रूपी जल चाहिए।

क्रमशः संकलन – प्रो० पुरुषोत्तमकुमार जैन, रुड़की

समाचार-दर्शन

दशलक्षण महापर्व सानन्द सम्पन्न

तीर्थधाम मङ्गलायतन : यहाँ पर्वाधिराज दशलक्षण महापर्व के अवसर पर 31 अगस्त से 09 सितम्बर 2022 तक श्री दशलक्षण विधान का भव्य आयोजन पण्डित सुधीर शास्त्री के निर्देशन में किया गया। जिसमें मङ्गलार्थी हिमालय जैन, समकित जैन का सहयोग रहा।

दैनिक कार्यक्रमों में प्रतिदिन प्रात: देव पूजन-प्रक्षाल, पूज्य गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन तत्पश्चात् मङ्गलार्थी हिमालय का मोक्षमार्गप्रकाशक के नौवें अधिकार पर 'आत्मा का हित मोक्ष ही है' विषय पर मार्मिक व्याख्यानों का लाभ मिला।

दोपहर में बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन द्वारा षट्खण्डागमजी वाचना और बाद में तत्त्वचर्चा से सभी अभिभूत हुए।

सायंकाल मङ्गलार्थी स्वाध्याय, जिनेन्द्रभक्ति, बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन द्वारा धर्म के दशलक्षणों पर मार्मिक उद्बोधन और शंका-समाधान तथा अनेक ज्ञानवर्धक सांस्कृतिक कार्यक्रम मङ्गलार्थियों द्वारा प्रतिदिन आयोजित किये गये। जिसमें सभी ने सोत्साह भाग लिया। इस अवसर पर बाहर से पधारे हुए साधर्मी भाई-बहिनों के अलावा श्री जैनबहादुर जैन, कानपुर; श्री अनिल जैन परिवार, बुलन्दशहर; श्री स्वप्निल जैन परिवार और समस्त मङ्गलायतन परिवार उपस्थित था। इसी के साथ पण्डित दौलतरामजी जन्मस्थली सासनी के दिगम्बर जैन मन्दिर में पण्डित सुधीर शास्त्री द्वारा दशधर्मों पर प्रतिदिन स्वाध्याय का लाभ सासनी समाज ने लिया।

मोरबी : पण्डित अशोक लुहाड़िया द्वारा दिनांक 31 अगस्त से 11 सितम्बर 2022 तक दशलक्षण महापर्व के अवसर पर मोक्षमार्गप्रकाशक के आधार से सात तत्त्व सम्बन्धी भूल पर विशेष चर्चा व समाज में पूज्य गुरुदेव के सी.डी. प्रवचन व समाज स्वाध्याय का विशेष नियमितता बनी। सभी मुमुक्षु भाई-बहिनों का मङ्गलायतन के प्रति विशेष योगदान का भाव रहा।

गजपंथा : पण्डित सचिन जैन, तीर्थधाम मङ्गलायतन द्वारा सिद्धक्षेत्र गजपंथा की तलहटी में निर्मित जिनमन्दिर में दशलक्षण पर्व के अवसर पर धर्म के विभिन्न पहलुओं को स्पष्ट करते हुए खूब-खूब तत्त्वप्रभावना हुई।

भीलवाड़ा : यहाँ दशलक्षण महापर्व के अवसर पर डॉ. सचिन्द्र शास्त्री के द्वारा श्री सीमन्धर जिनालय भीलवाड़ा में एवं श्री पार्श्वनाथ कल्पद्रुम बड़ा मन्दिर में अजमेरों की गोंठ में धर्मप्रभावना हुई।

कार्यक्रम इस प्रकार रहा। प्रात: प्रक्षाल, पूजन, विधान, तत्पश्चात् ग्रन्थाधिराज

समयसार पर स्वाध्याय। सायंकालीन भक्ति तथा पाठ और बड़े मन्दिर में धर्म के दशलक्षणों पर मार्मिक व्याख्या हुए। जिसमें भारी संख्या में लोगों ने लाभ लिया।

अहमदाबाद : दशलक्षण पर्व के अवसर पर दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल मणिनगर में पण्डित कमलजी पिड़ावा के द्वारा ग्रन्थाधिराज समयसारजी एवं धर्म के दशलक्षण के आधार से दोनों समय व्याख्यान हुए व प्रतिदिन पाठशाला के बच्चों के द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन हुआ। अन्तिम दिन भव्य रथयात्रा का आयोजन किया गया, जिसमें सभी ने उत्साहपूर्वक भाग लिया।

तीर्थधाम मङ्गलायतन में विशिष्ट अतिथि

तीर्थधाम मङ्गलायतन में विशिष्ट अतिथि की शृंखला में न्यायमूर्ति श्री नरेन्द्र जैन (रिटायर्ड जज हाईकोर्ट), आप वर्तमान में अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था भारत सरकार में चेयरमैन के पद पर कार्यरत हैं। आपने तीर्थधाम मङ्गलायतन स्थित धन्यमुनिदशा प्रकल्प और समस्त जिनालयों की वन्दना-दर्शन का लाभ लिया और साथ ही महावीर मन्दिर में दर्शन के पश्चात् यहाँ संचालित भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन के मङ्गलार्थी बच्चों को मार्गदर्शन दिया एवं उनके प्रश्नों का धैर्यतापूर्वक समाधान दिया। सभी बच्चों से उनकी भावी योजनाओं के सम्बन्ध में जानकारी ली तथा बच्चे कैसे अपने स्वप्न साकार करें, इस सम्बन्ध में सफलता का मूलमन्त्र बच्चों को बतलाया।

पण्डित सुधीरजी शास्त्री ने अंगवस्त्र पहनाकर व अहोभाव ग्रन्थ तथा मङ्गलायतन परिचय भेंटकर स्वागत किया।

तीर्थधाम मङ्गलायतन से षट्खण्डागम ग्रन्थ की वाचना अनवरत प्रवाहित

द्वितीय खण्ड खुद्दाबन्ध (क्षुल्लकबन्ध)

सातवीं पुस्तक की वाचना 03 अगस्त 2022 से प्रारम्भ

विद्वत् समागम - विदुषी बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर एवं सहयोगी भाई-बहिनों तथा मंगलायतन परिवार का भी लाभ प्राप्त होता है।

दोपहर 01.30 से 03.15 तक (प्रतिदिन) **षट्खण्डागम (धवलाजी)**

रात्रि 07.30 से 08.30 तक मूलाचार ग्रन्थ का स्वाध्याय

08.30 से 09.15 तक समयसार ग्रन्थाधिराज के कलशों का व्याकरण के नियमानुसार शुद्ध उच्चारण सहित सामान्यार्थ

नोट—इस कार्यक्रम में आप ZOOM ID-9121984198,
Password - mang4321 के माध्यम से भी शामिल हो सकते हैं।

मङ्गल वात्सल्य-निधि

सदस्यता फार्म

नाम .....

पता .....

..... पिन कोड .....

मोबाइल ..... ई-मेल .....

मैं **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** योजना की सदस्यता स्वीकार करता हूँ और मैं ..... राशि जमा करवाऊँगा / दूँगा।

हस्ताक्षर

- चौथाई ग्रास दान भी अनुकरणीय -

ग्रासस्तदर्धमपि देयमथार्धमेव,
तस्यापि सन्ततमणुव्रतिना यथर्द्धिः।
इच्छानुसाररूपमिह कस्य कदात्र लोके,
द्रव्यं भविष्यति सदुत्तमदानहेतुः॥

अर्थात् गृहस्थियों को अपने धन के अनुसार एक ग्रास अथवा आधा ग्रास अथवा चौथाई ग्रास अवश्य ही दान देना चाहिए। तात्पर्य यह है कि हमें ऐसा नहीं समझना चाहिए कि जब मैं लखपति या करोड़पति हो जाऊँगा, तब दान दूँगा; बल्कि जितना धन हमारे पास है, उसी के अनुसार थोड़ा-बहुत दान अवश्य देना चाहिए। - आचार्य पद्मनन्दि : पद्मनन्दि पञ्चविंशतिका, श्लोक 230

यह राशि आप निम्न प्रकार से हमें भेज सकते हैं -

1. बैंक द्वारा

NAME	:	SHRI ADINATH KUNDKUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST, ALIGARH
BANK NAME	:	PUNJAB NATIONAL BANK
BRANCH	:	RAILWAY ROAD, ALIGARH
A/C. NO.	:	1825000100065332
RTGS/NEFTS IFS CODE	:	PUNB0001000
PAN NO.	:	AABTA0995P

2. Online : http://www.mangalayatan.com/online-donation/
3. ECS : Auto Debit Form के माध्यम से।

नवम्बर 2022 माह के मुख्य जैन तिथि-पर्व

1 नवम्बर – कार्तिक शुक्ल 8
अष्टमी
अष्टाह्निका व्रत प्रारम्भ
5 नवम्बर – कार्तिक शुक्ल 12
भगवान श्री अरनाथ ज्ञान कल्याणक
7 नवम्बर – कार्तिक शुक्ल 14
चतुर्दशी
8 नवम्बर – कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा
अष्टाह्निका व्रत पूर्ण
भगवान श्री संभवनाथ जन्म कल्याणक
10 नवम्बर – मार्गशीर्ष कृष्ण 2
रोहिणी व्रत
15 नवम्बर – मार्गशीर्ष कृष्ण 7
श्री संभवनाथ जन्म कल्याणक
कानजीस्वामी स्मृति दिवस
16 नवम्बर – मार्गशीर्ष कृष्ण 8 **अष्टमी**
19 नवम्बर – मार्गशीर्ष कृष्ण 10
भगवान महावीरस्वामी तप कल्याणक
22 नवम्बर – मार्गशीर्ष कृष्ण 13-14
चतुर्दशी
24 नवम्बर – मार्गशीर्ष शुक्ल 1
भगवान पुष्पदन्त जन्म-तप कल्याणक
30 नवम्बर – मार्गशीर्ष शुक्ल 7-8
अष्टमी

सम्माननीय पाठक कृपया ध्यान देवें

आपको यदि तीर्थधाम मङ्गलायतन से प्रकाशित मासिक पत्रिका **मङ्गलायतन** यदि नहीं मिल रही / पता बदलना / बन्द करना हो तो आप हमें निम्न फार्म भरकर कृपया अवश्य भेजें।

नाम / पत्रिका ग्राहक संख्या .....

पता .....

.....

.....

मोबा. ..... ई-मेल .....

कृपया निम्न पते पर भेजने का कष्ट करे अथवा whatsapp भी भेज सकते हैं -

सम्पादक, मङ्गलायतन मासिक पत्रिका
तीर्थधाम मङ्गलायतन, आगरा-अलीगढ़ राजमार्ग
सासनी-204216 (हाथरस) उत्तरप्रदेश
whatsapp : 7581060200, 9756633800
Email : info@mangalayatan.com

तीर्थधाम मङ्गलायतन में विशिष्ट अतिथि की शृंखला में

न्यायमूर्ति श्री नरेन्द्र जैन (रिटायर्ड जज हाईकोर्ट)

चेयरमैन, अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था भारत सरकार

Regn. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

मुनिराज की अलौकिक दशा

मुनिराज की दशा अलौकिक है, जात्यन्तर है। **मुनिराज, स्वरूप-उपवन में लीला करते-करते अर्थात् स्वरूप-उपवन में रमते-रमते कर्मों का नाश करते हैं। वे दुःखी नहीं होते** - ऐसी उनकी जात्यन्तर दशा है, लीला है। स्वरूप ही उनका आसन है, स्वरूप ही उनकी बैठक है, स्वरूप ही उनका आहार है, स्वरूप में ही उनका विचरण है, स्वरूप ही उनकी लीला है। जो अन्तर की आनन्द-क्रीड़ा में रमने लगे, उनकी लीला जात्यन्तर है।

(- जिणसासणं सव्वं, पृष्ठ 32)

पं. सं. : DELBIL/2001/4685

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक स्वप्निल जैन द्वारा **मङ्गलायतन** मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़-202001 छपवाकर, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़-202001 से प्रकाशित। **सम्पादक :** डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन।

If undelivered please return to -

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरारोड, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.)

Shri Adinath-Kundkund-Kahan Digamber Jain Trust

Harinagar, Agra Road, Aligarh-202001 (U.P.)

Ph. : 9997996346, 2410010/10; Fax : 2410019/22

info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com

चलो मङ्गलायतन....
रहो मङ्गलायतन.... बनो मङ्गलायतन

तीर्थधाम मङ्गलायतन
www.mangalayatan.com

आचार्यश्री कुन्दकुन्ददेव

श्री 1008 महावीर भगवान

सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी

मङ्गल आमन्त्रण

आध्यात्मिक शिक्षण शिविर

(दिनांक रविवार, 23 अक्टूबर से गुरुवार, 27 अक्टूबर 2022)

सद्धर्मानुरागी बन्धुवर, सादर जय-जिनेन्द्र एवं शुद्धात्म सत्कार!

आपको यह जानकर हर्ष होगा, वीर जिनेन्द्र के शासन में, श्री कुन्दकुन्दादि दिगम्बर आचार्यों की अनुकम्पा से और पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी, तद्भक्त प्रशममूर्ति बहिनश्री चम्पाबेन के प्रभावनायोग में एवं आप सभी के सहयोग से तीर्थधाम मङ्गलायतन, जिनशासन की आराधना-प्रभावना का महत् कार्य कर रहा है।

प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी, शासन नायक भगवान श्री महावीरस्वामी के निर्वाण कल्याणक प्रसंग पर, तीर्थधाम मङ्गलायतन के सुरम्य वातावरण में **श्री आदिनाथ कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़** एवं **श्री कुन्दकुन्द प्रवचन प्रसारण संस्थान उज्जैन** के संयुक्त तत्त्वावधान में **पंच दिवसीय आध्यात्मिक शिक्षण शिविर** का आयोजन दिनांक **रविवार, 23 अक्टूबर से गुरुवार, 27 अक्टूबर 2022** तक किया जा रहा है।

इस शिविर में पूज्य गुरुदेव के भवतापहारी सी.डी. प्रवचन, उन्हीं के मार्ग की प्रभावना करनेवाले विद्वानों के स्वाध्याय, पूजन-विधान एवं मङ्गलार्थियों द्वारा तात्त्विक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये जायेंगे। इस अवसर पर श्री पंच-परमागम विधान के साथ भगवान महावीर का निर्वाण महोत्सव मनाया जायेगा।

आलोकित ज्ञानदीप :— प० दादाश्री विमलचंद झांझरी, उज्जैन; प० जे.पी. दोशी, मुम्बई; प० प्रदीप झांझरी, सूरत; डॉ. संजीव गोधा, जयपुर; प० संजय शास्त्री, जेवर, कोटा; प० हितेश चौबटिया, मुम्बई; डॉ.योगेश जैन, अलीगंज; ब्र. सुकमाल झांझरी, उज्जैन; प० विराग शास्त्री, जबलपुर; प० ऋषभ शास्त्री, दिल्ली; प० अरहन्त झांझरी, उज्जैन; प० नगेश जैन, पिड़ावा; बा.ब्र. कल्पनाबेन; बा.ब्र. ज्ञानलताबेन झांझरी, पुष्पलताबेन झांझरी, समताबेन झांझरी, उज्जैन; प० अमित अरहन्त शास्त्री; प० अशोक लुहाड़िया, प० सचिन जैन, प० सुधीर शास्त्री, डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, प० समकित शास्त्री, तीर्थधाम मङ्गलायतन।

ध्वजारोहणकर्ता :
श्री अनिलजी जैन-श्रीमती ज्योति जैन परिवार, उज्जैन

शिविर उद्घाटनकर्ता :
डॉ. अशोकजी जैन एवं श्री विजयजी बड़जात्या परिवार, इन्दौर

विधान आमन्त्रणकर्ता :
डॉ. बासन्तीबेन, मुम्बई
श्री प्रेमचन्दजी बजाज, कोटा
श्री जैनबहादुरजी जैन, कानपुर
श्री नरेशजी जैन-श्रीमती अर्चना जैन परिवार, ग्वालियर
श्री कमलजी बोहरा परिवार, कोटा

— मुख्य आकर्षण —

पुरुस्कार वितरण समारोह : विज्ञान वाटिका
भव्य विमोचन समारोह : बोलता हुआ समयसार
भगवान श्री महावीरस्वामी निर्वाण महोत्सव
संगीतमय पूजन-विधान एवं आध्यात्मिक भजन सन्ध्या
पौराणिक कथाएँ एवं विद्वत सम्मेलन
तीर्थधाम मङ्गलायतन दर्शन एवं साधर्मी मिलन
ज्ञानवर्धक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम
विद्वानों द्वारा विशिष्ट स्वाध्याय एवं तत्त्व परिचर्चा

निवेदक
श्री अजितप्रसाद जैन, अध्यक्ष / **स्वप्निल जैन,** महासचिव
श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ.प्र.)
प्रदीप झांझरी, अध्यक्ष / **नागेश जैन,** महासचिव
श्री कुन्दकुन्द प्रवचन प्रसारण संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

सम्पर्कसूत्र एवं कार्यक्रमस्थल—
पण्डित सुधीर शास्त्री, तीर्थधाम मङ्गलायतन
अलीगढ़-आगरा राजमार्ग, सासनी-204216 (हाथरस) उ.प्र.
+91 9319811708
+91 7895761327
+91 9997996346